**ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA**
RNI TITLED NO. UPBIL**04292**
RNI REG. NO. UPBIL/**2014/66218** **PP. No.- 186-188**
**I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)**
**e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)**
**Vol.-19, No.- IV, Issues-38, YEAR- Oct.-Dec.2025**

# समकालीन हिंदी साहित्य में मौन का विमर्श : अनकहे अनुभवों, अस्मिता और प्रतिरोध की अभिव्यक्ति का आलोचनात्मक अध्ययन

प्रियांशा त्रिपाठी
उन्नाव (उ0प्र0) भारत

**Received-30.11.2025, Revised-06.12.2025, Accepted-12.12.2025** **E-mail: priyanshatripathi300@gmail.com**

***सारांशः*** ***मौन सामान्यतः वाणी के अभाव अथवा चुप रहने की स्थिति के रूप में समझा जाता है, किंतु साहित्य में मौन केवल शब्दों की अनुपस्थिति नहीं है। वह अनेक बार ऐसी अनुभूतियों, पीड़ाओं, इच्छाओं, असहमतियों और प्रतिरोधों को व्यक्त करता है जिन्हें सीधे शब्दों में कहना संभव नहीं होता। विशेष रूप से समकालीन हिंदी साहित्य में मौन एक महत्त्वपूर्ण अभिव्यक्तिगत संरचना के रूप में उभरता है। स्त्री, दलित, आदिवासी, श्रमिक, वृद्ध, विस्थापित तथा अन्य हाशिए के पात्रों के अनुभवों में मौन केवल विवशता का संकेत नहीं, बल्कि सामाजिक संरचनाओं के विरुद्ध एक सूक्ष्म प्रतिक्रिया भी हो सकता है। प्रस्तुत आलेख में समकालीन हिंदी साहित्य के संदर्भ में मौन की बहुआयामी प्रकृति का आलोचनात्मक अध्ययन किया गया है। इसमें मौन को पीड़ा, अस्मिता, अकेलेपन, सामाजिक दबाव, स्मृति, असहमति और प्रतिरोध से जोड़कर देखा गया है। लेख का उद्देश्य यह रेखांकित करना है कि साहित्य में जो कुछ कहा जाता है, उसके साथ–साथ जो कुछ नहीं कहा जाता, वह भी अर्थ का निर्माण करता है। मौन कभी आरोपित चुप्पी है, तो कभी स्वयं चुनी गई अभिव्यक्ति। इस द्वंद्व के माध्यम से समकालीन हिंदी साहित्य मनुष्य के भीतर और समाज के बाहर उपस्थित अनेक अनकहे प्रश्नों को सामने लाता है।***

***कुंजीभूत शब्द– मौन, अनकहा, प्रतिरोध,स्त्री–विमर्श,समकालीन हिंदी साहित्य,हाशियाकरण,सामाजिक दबाव,अकेलापन, अस्मिता,द्वंद्व।***

**प्रस्तावना–** साहित्य मूलतः मनुष्य के अनुभवों की अभिव्यक्ति है। मनुष्य अपने अनुभवों को शब्दों, संकेतों, प्रतीकों, बिंबों और व्यवहार के माध्यम से व्यक्त करता है। किंतु मानवीय अनुभव का एक बड़ा हिस्सा ऐसा भी होता है जिसे शब्दों में पूरी तरह व्यक्त नहीं किया जा सकता। कई बार सामाजिक दबाव, भय, संकोच, संबंधों की जटिलता या भीतर की गहरी पीड़ा मनुष्य को बोलने से रोकती है। ऐसी स्थिति में मौन स्वयं एक भाषा का रूप ग्रहण कर लेता है।

मौन को केवल चुप्पी मान लेना उसके साहित्यिक अर्थ को सीमित कर देना है। किसी पात्र का चुप रहना कई अर्थों को जन्म दे सकता है। वह भय के कारण चुप हो सकता है, सामाजिक मर्यादा के कारण चुप हो सकता है, विरोध के कारण चुप हो सकता है या इसलिए भी चुप हो सकता है कि उसके पास अपने अनुभव को व्यक्त करने के लिए उपयुक्त भाषा नहीं है। इसी कारण साहित्यिक मौन एक बहुअर्थी संरचना है।

समकालीन हिंदी साहित्य में मौन का प्रश्न इसलिए महत्त्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि आधुनिक जीवन में संवाद के साधन बढ़ने के बावजूद मनुष्य के भीतर का अकेलापन और अनकहा अनुभव समाप्त नहीं हुआ है। डिजिटल माध्यमों ने अभिव्यक्ति के अवसर बढ़ाए हैं, लेकिन हर अनुभव सार्वजनिक नहीं हो सकता। व्यक्ति अनेक बार भीड़ में रहते हुए भी अपनी पीड़ा के साथ अकेला रहता है।

स्त्री–विमर्श, दलित–विमर्श, आदिवासी–विमर्श और अन्य समकालीन विमर्शों ने उन आवाजों को साहित्य के केंद्र में लाने का प्रयास किया है जिन्हें लंबे समय तक हाशिए पर रखा गया। इस प्रक्रिया में मौन का प्रश्न और भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि हाशिए के अनुभवों का एक हिस्सा वह है जो लंबे समय तक बोला ही नहीं जा सका।

**मौन की अवधारणा : चुप्पी से आगे–** मौन को सामान्य अर्थ में बोलने की अनुपस्थिति माना जाता है, लेकिन साहित्यिक दृष्टि से यह एक सक्रिय अर्थ–क्षेत्र है। किसी पात्र का मौन पाठक को उसके भीतर प्रवेश करने के लिए प्रेरित करता है। जहाँ संवाद समाप्त होता है, वहाँ पाठक अनुमान, संकेत और व्यवहार के आधार पर अर्थ निर्मित करता है।

मौन की पहली स्थिति वह है जिसमें व्यक्ति पर चुप रहने का दबाव होता है। परिवार, समाज, जाति, वर्ग, लिंग अथवा सत्ता–संरचना व्यक्ति की वाणी को नियंत्रित कर सकती है। दूसरी स्थिति स्वैच्छिक मौन की है, जहाँ व्यक्ति बोलने के बजाय चुप रहने का निर्णय स्वयं करता है। तीसरी स्थिति वह है जिसमें मौन प्रतिरोध बन जाता है।

इन तीनों स्थितियों में अंतर करना आवश्यक है। विवश मौन में व्यक्ति की आवाज दबाई जाती है, जबकि प्रतिरोधी मौन में व्यक्ति अपनी चुप्पी को ही प्रतिक्रिया का माध्यम बना सकता है। इसीलिए हर मौन को कमजोरी समझना उचित नहीं है।

**स्त्री का मौन : परंपरा और प्रतिरोध के बीच–** भारतीय सामाजिक व्यवस्था में स्त्री के मौन को लंबे समय तक उसके संस्कार, शालीनता और सहनशीलता से जोड़ा गया। आदर्श स्त्री की छवि में त्याग, धैर्य और सहनशीलता को महत्त्व दिया गया। परिणामतः स्त्री से अपेक्षा की गई कि वह परिवार की शांति बनाए रखने के लिए अनेक बार अपनी इच्छाओं और असहमति को दबा दे।

समकालीन हिंदी साहित्य इस परंपरागत मौन को प्रश्नांकित करता है। साहित्यिक स्त्री अब केवल सहने वाली पात्र नहीं है। वह अपने भीतर के प्रश्नों को पहचानती है और यह समझने लगती है कि लगातार चुप रहना भी अन्याय को स्थायी बना सकता है। फिर भी स्त्री का प्रतिरोध हमेशा मुखर नहीं होता। कई बार उसका चुप रहना ही व्यवस्था के प्रति असहमति का संकेत बन जाता है। वह अपेक्षित प्रतिक्रिया देने से इंकार करती है, अपने निर्णय स्वयं लेती है अथवा उस भूमिका को स्वीकार नहीं करती जो समाज ने उसके लिए निर्धारित की है।

**मौन और स्त्री–अस्मिता–** अस्मिता का निर्माण व्यक्ति की स्वयं के प्रति चेतना से होता है। जब किसी व्यक्ति को लगातार यह बताया जाता है कि उसकी पहचान परिवार, जाति, लिंग या सामाजिक भूमिका से निर्धारित होती है, तब उसकी व्यक्तिगत अस्मिता सीमित हो जाती है।

स्त्री के संदर्भ में यह समस्या अधिक जटिल है। विवाह, मातृत्व, परिवार और सामाजिक अपेक्षाएँ उसकी पहचान के प्रमुख आधार बनाए जाते रहे हैं। साहित्य में स्त्री के मौन के भीतर इसी पहचान–संकट की आवाज सुनाई देती है। कई स्त्री पात्रों के भीतर एक ऐसा संवाद चलता है जिसे वे बाहरी संसार में व्यक्त नहीं कर पातीं। यह आंतरिक संवाद उनकी अस्मिता के निर्माण की प्रक्रिया है। वे अपने जीवन को दूसरों की दृष्टि से नहीं, बल्कि स्वयं की दृष्टि से देखने लगती हैं। यहीं मौन आत्म–अभिव्यक्ति का माध्यम बनता है।

**मौन और घरेलू सत्ता–संबंध–** परिवार को सामान्यतः प्रेम और सुरक्षा का स्थान माना जाता है, किंतु परिवार के भीतर भी सत्ता–संबंध मौजूद होते हैं। कौन निर्णय लेगा, किसकी बात मानी जाएगी, किसके समय को महत्त्व मिलेगा और किसकी इच्छाएँ प्राथमिक होंगीकृये सभी प्रश्न घरेलू सत्ता–संरचना से जुड़े हैं।

**अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक**

समकालीन हिंदी साहित्य में स्त्री का मौन इन सत्ता–संबंधों को उजागर करता है। वह कई बार इसलिए नहीं बोलती क्योंकि उसे पता है कि उसकी बात को महत्त्व नहीं दिया जाएगा। इस प्रकार मौन केवल व्यक्तिगत भावनात्मक स्थिति नहीं, बल्कि सामाजिक सत्ता का परिणाम भी हो सकता है। इसके साथ ही साहित्य यह भी दिखाता है कि जब स्त्री अपने मौन को पहचानने लगती है, तब वही मौन आत्मचेतना में बदल सकता है।

**मौन और पीड़ा–** पीड़ा का अनुभव हमेशा शब्दों में व्यक्त नहीं होता। गहरी पीड़ा के क्षणों में व्यक्ति अक्सर चुप हो जाता है। साहित्य इस मौन को संवेदना की ऐसी भाषा में बदल देता है जिसमें शब्दों से अधिक संकेत महत्त्वपूर्ण होते हैं।

समकालीन हिंदी कथा–साहित्य में अनेक पात्र अपनी पीड़ा को सीधे व्यक्त नहीं करते। उनका व्यवहार, उनकी दूरी, उनका अकेलापन या उनका सामान्य दिखने का प्रयास भीतर के तनाव को व्यक्त करता है। इस दृष्टि से साहित्यिक मौन पाठक को सक्रिय बनाता है। पाठक को केवल कथाकार द्वारा कही गई बात नहीं मिलती, बल्कि उसे पात्र के अनकहे अनुभव को समझना पड़ता है।

**मौन और अकेलापन–** आधुनिक जीवन में संवाद के साधनों की संख्या बढ़ी है। मोबाइल, इंटरनेट और सोशल मीडिया ने व्यक्ति को लगातार संपर्क में रहने की सुविधा दी है। फिर भी भावनात्मक अकेलापन एक महत्त्वपूर्ण आधुनिक अनुभव बना हुआ है।

समकालीन साहित्य इस विरोधाभास को सामने लाता है। व्यक्ति अनेक लोगों से जुड़ा दिखाई देता है, लेकिन अपने सबसे गहरे अनुभवों को साझा करने में असमर्थ रहता है। उसके आसपास शब्द बहुत हैं, लेकिन अर्थपूर्ण संवाद कम है। इस स्थिति का मौन आधुनिक मनुष्य की आंतरिक दूरी का मौन है। वह परिवार में रहते हुए भी अकेला हो सकता है, मित्रों के बीच होते हुए भी अपनी बात न कह सकता है और डिजिटल माध्यम पर सक्रिय रहते हुए भी भावनात्मक रूप से रिक्त अनुभव कर सकता है।

**मौन और स्मृति–** मौन का संबंध स्मृति से भी गहरा है। व्यक्ति अपने अतीत की अनेक घटनाओं को याद करता है, लेकिन उन्हें हमेशा व्यक्त नहीं करता। कुछ स्मृतियाँ इतनी निजी या पीड़ादायक होती हैं कि वे शब्दों के बजाय मौन में सुरक्षित रहती हैं।

साहित्य इन मौन स्मृतियों को कथात्मक रूप देता है। पात्र अपने अतीत को वर्तमान में लेकर चलता है और उसकी वर्तमान प्रतिक्रिया कई बार अतीत की अनकही घटनाओं से संचालित होती है। विशेषतः विस्थापन, हिंसा, सामाजिक अपमान और संबंधों के टूटने जैसे अनुभवों में स्मृति और मौन का संबंध गहरा होता है।

**हाशिए के अनुभव और मौन–** साहित्य में हाशिए के समुदायों की उपस्थिति बढ़ने के साथ मौन की अवधारणा भी व्यापक हुई है। दलित, आदिवासी, स्त्री और अन्य वंचित समूहों के अनुभवों में मौन केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि ऐतिहासिक और सामाजिक भी हो सकता है। जब किसी समुदाय की आवाज को लंबे समय तक मुख्यधारा में स्थान नहीं मिलता, तब उसका मौन सामाजिक संरचना द्वारा निर्मित होता है। आधुनिक हिंदी साहित्य ने इस स्थिति को चुनौती दी है। हाशिए के अनुभवों को स्वयं की भाषा और दृष्टि से प्रस्तुत करने की प्रक्रिया ने मौन को आवाज में बदलने का कार्य किया है।

यहाँ एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन दिखाई देता है। पहले साहित्य में हाशिए के पात्रों के बारे में कोई दूसरा बोलता था; अब वे स्वयं अपने अनुभवों को अभिव्यक्त करते हैं।

**मौन से प्रतिरोध तक–** मौन और प्रतिरोध के बीच संबंध सीधा नहीं है। हर मौन प्रतिरोध नहीं होता। लेकिन जब मौन व्यक्ति की सचेत असहमति बन जाता है, तब वह प्रतिरोध का रूप ग्रहण कर सकता है। प्रतिरोधी मौन कई रूपों में दिखाई देता है। किसी आदेश का पालन न करना, अपेक्षित प्रतिक्रिया न देना, अन्याय के सामने अपनी उपस्थिति बनाए रखना या सत्ता द्वारा निर्धारित भाषा को अस्वीकार करनाकृये सभी मौन प्रतिरोध के रूप हो सकते हैं।

साहित्य में ऐसे पात्र महत्त्वपूर्ण हैं जो बिना लंबे भाषण दिए अपनी स्थिति स्पष्ट करते हैं। उनका व्यवहार ही उनके विरोध की भाषा बन जाता है। इस दृष्टि से मौन को प्रतिरोध की एक सूक्ष्म रणनीति कहा जा सकता है।

**मौन और भाषा का संबंध–** मौन भाषा का विरोध नहीं, बल्कि भाषा का एक विशेष विस्तार है। जब लेखक किसी पात्र को चुप दिखाता है तो वह पाठक के लिए अर्थ की नई संभावनाएँ खोलता है। साहित्य में विराम, अधूरे वाक्य, चुप्पी, दृष्टि, दूरी और अनुत्तरित प्रश्न भी अर्थ निर्माण करते हैं। इसलिए मौन को साहित्यिक शिल्प का हिस्सा भी माना जा सकता है।

समकालीन रचनाकारों के लिए यह विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है क्योंकि आधुनिक अनुभव हमेशा रैखिक कथन से व्यक्त नहीं होते। मनुष्य का मन स्वयं विरोधाभासी है। ऐसी जटिलताओं को मौन अधिक प्रभावी ढंग से व्यक्त कर सकता है।

**समकालीन हिंदी कथा–साहित्य में मौन–** समकालीन हिंदी कथा–साहित्य में स्त्री और परिवार से जुड़े अनुभवों के साथ मौन का विशेष संबंध दिखाई देता है। मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, ममता कालिया, मैत्रेयी पुष्पा और अन्य लेखिकाओं की रचनाओं में स्त्री के निजी अनुभव, पारिवारिक संबंध और सामाजिक अपेक्षाएँ विभिन्न रूपों में सामने आती हैं।

इन रचनाकारों के साहित्य को केवल 'स्त्री की पीड़ा' के रूप में पढ़ना पर्याप्त नहीं होगा। इनके पात्रों के भीतर निर्णय, असहमति, आत्मसम्मान और स्वतंत्रता की आकांक्षा भी दिखाई देती है। कई बार यही आकांक्षा संवाद की अपेक्षा मौन, व्यवहार या आंतरिक संघर्ष के माध्यम से व्यक्त होती है।

इसी प्रकार समकालीन दलित और आदिवासी साहित्य ने उन अनुभवों को शब्द दिए हैं, जिन्हें मुख्यधारा की साहित्यिक परंपरा में लंबे समय तक पर्याप्त स्थान नहीं मिला। इस साहित्य का महत्त्व इस बात में है कि वह मौन को केवल सहने की स्थिति नहीं रहने देता, बल्कि उसे सामाजिक स्मृति और प्रतिरोध की भाषा में बदलता है।

**मौन की राजनीति–** मौन की एक राजनीतिक संरचना भी होती है। कौन बोल सकता है, किसकी बात सुनी जाती है और किसकी बात को महत्वहीन मानकर छोड़ दिया जाता है– ये सभी प्रश्न सत्ता से जुड़े हैं।

सामाजिक जीवन में कई बार बोलने का अधिकार समान रूप से वितरित नहीं होता। प्रभावशाली व्यक्ति की बात तुरंत सुनी जाती है, जबकि कमजोर व्यक्ति की बात को अनदेखा किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में मौन केवल व्यक्ति की पसंद नहीं, बल्कि सत्ता–संबंधों का परिणाम होता है। साहित्य इन संबंधों को दृश्य बनाता है। वह पाठक को यह समझने के लिए प्रेरित करता है कि किसी पात्र की चुप्पी के पीछे कौन–सी सामाजिक शक्तियाँ कार्य कर रही हैं।

**मौन की सीमाएँ–** मौन को प्रतिरोध का रोमानी रूप देना भी उचित नहीं है। कई परिस्थितियों में मौन व्यक्ति की असहायता का परिणाम होता है। हिंसा, भय, आर्थिक निर्भरता, सामाजिक बहिष्कार और पारिवारिक दबाव व्यक्ति को बोलने से रोक सकते हैं।

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.- IV, Issues-38, YEAR- Oct.-Dec.2025

इसलिए साहित्य में मौन की व्याख्या करते समय उसके संदर्भ को समझना आवश्यक है। एक ही चुप्पी दो अलग पात्रों के लिए अलग अर्थ रख सकती है। किसी के लिए वह भय है, किसी के लिए आत्मसंयम और किसी के लिए प्रतिरोध। मौन की यही बहुअर्थिता उसे साहित्यिक अध्ययन का महत्त्वपूर्ण विषय बनाती है।

**समकालीन संदर्भ में मौन का नया अर्थ–** डिजिटल युग में मौन की प्रकृति बदल रही है। आज व्यक्ति सार्वजनिक मंचों पर अपने विचार व्यक्त कर सकता है, लेकिन डिजिटल अभिव्यक्ति भी अनेक बार प्रदर्शनात्मक हो जाती है। लगातार बोलने की संस्कृति में वास्तविक संवाद का अभाव दिखाई दे सकता है।

इस संदर्भ में मौन आत्मचिंतन का अवसर भी हो सकता है। हर अनुभव को सार्वजनिक करना आवश्यक नहीं। व्यक्ति का निजी मौन उसकी निजता और आत्मस्वायत्तता की रक्षा कर सकता है। साहित्य इस नए मौन को भी अभिव्यक्त कर रहा है। आधुनिक पात्रों के भीतर डिजिटल संसार की सक्रियता और निजी जीवन की रिक्तता का विरोधाभास दिखाई देता है।

**निष्कर्ष–** समकालीन हिंदी साहित्य में मौन एक बहुस्तरीय और बहुअर्थी साहित्यिक विमर्श के रूप में उभरता है। इसे केवल वाणी के अभाव के रूप में समझना साहित्य में उसकी वास्तविक भूमिका को सीमित कर देता है। मौन के भीतर पीड़ा, भय, स्मृति, अकेलापन, आत्मसंघर्ष, अस्मिता, असहमति और प्रतिरोध के अनेक अर्थ छिपे हो सकते हैं।

विशेष रूप से स्त्री के संदर्भ में मौन की अवधारणा पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था और व्यक्तिगत अस्मिता के बीच के तनाव को समझने में सहायता करती है। जिस मौन को कभी स्त्री के आदर्श गुण के रूप में स्थापित किया गया था, वही मौन आधुनिक साहित्य में प्रश्न और प्रतिरोध की जमीन बन सकता है।

इसी प्रकार हाशिए के समुदायों के संदर्भ में मौन का अर्थ सामाजिक बहिष्कार से लेकर आत्म–अभिव्यक्ति तक विस्तृत होता है। जब कोई समुदाय अपनी आवाज स्वयं निर्मित करता है, तब उसका मौन टूटना केवल बोलने की घटना नहीं, बल्कि सत्ता–संबंधों के पुनर्गठन की प्रक्रिया बन जाता है। समकालीन हिंदी साहित्य का महत्त्व इस बात में है कि वह केवल मुखर आवाजों को ही नहीं, बल्कि उन अनुभवों को भी अभिव्यक्ति देता है जो लंबे समय तक अनकहे रहे। साहित्य पाठक को शब्दों के साथ–साथ शब्दों के बीच की खामोशी पढ़ना सिखाता है।

अतः मौन को निष्क्रियता के पर्याय के रूप में देखना उचित नहीं। वह कभी विवशता है, कभी आत्मरक्षा, कभी आत्मसंवाद और कभी प्रतिरोध। साहित्य की शक्ति इसी में है कि वह इन विभिन्न स्तरों को एक साथ उपस्थित कर सकता है।

अंततः कहा जा सकता है कि समकालीन हिंदी साहित्य में मौन स्वयं एक भाषा हैकृऐसी भाषा जो हमेशा बोलती हुई दिखाई नहीं देती, लेकिन पाठक को सुनने के लिए बाध्य करती है। वह उन प्रश्नों को सामने लाती है जिन्हें समाज ने दबाया, उन अनुभवों को अर्थ देती है जिन्हें शब्द नहीं मिले और उन असहमतियों को पहचानती है जो लंबे समय तक चुप रहीं। इस दृष्टि से मौन का विमर्श समकालीन हिंदी साहित्य में मनुष्य की अस्मिता, संवेदना और प्रतिरोध को समझने का एक महत्त्वपूर्ण आलोचनात्मक उपकरण है।

## सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भंडारी, मन्नू – आपका बंटी।
2. सोबती, कृष्णा – मित्रो मरजानी।
3. प्रियंवदा, उषा – पचपन खंभे लाल दीवारें।
4. कालिया, ममता – बेघर।
5. पुष्पा, मैत्रेयी – इदन्नमम।
6. खेतान, प्रभा – उपनिवेश में स्त्री।
7. यादव, राजेंद्र – स्त्री–विमर्श संबंधी आलोचनात्मक लेखन।
8. सिंह, नामवर – दूसरी परंपरा की खोज।
9. समकालीन हिंदी कहानी और उपन्यास में स्त्री–अस्मिता, प्रतिरोध तथा सामाजिक यथार्थ पर प्रकाशित आलोचनात्मक अध्ययन।
10. हिंदी साहित्य में दलित, स्त्री, आदिवासी और अन्य हाशिए के विमर्श से संबंधित शोध–ग्रंथ एवं आलोचनात्मक आलेख।
11. समकालीन हिंदी साहित्य में मौन, अस्मिता और प्रतिरोध के अंतर्संबंधों पर प्रकाशित शोध–अध्ययन।

*****